नईदुनिया

भोपाल, 7 नवम्बर 2026

संपादकीय

मिठाई के नाम पर जहर बेचा जा रहा है, जिम्मेदार विभाग खामोश है

त्योहार पर जागने वाला विभाग क्या कहलाएगा पहरेदार? मिलावटखोरों के हौसले क्यों बुलंद हैं? बारह महीने निगरानी नहीं तो हर थाली में जहर तय है।

दीपावली आते ही बाजार रोशनी से भर जाते हैं और मिठाई की दुकानों पर भीड़ लग जाती है, लेकिन इस रोशनी के पीछे मिलावट का एक ऐसा अंधेरा भी है, जो हर साल गहराता जा रहा है। मिठाई के स्वाद में घुलकर यह जहर हर घर तक पहुंच रहा है और लोग अनजाने में इसे खुशी-खुशी खा रहे हैं। सवाल है कि इसे रोकने वाला खाद्य सुरक्षा विभाग आखिर पूरे साल कहां रहता है और त्योहार आते ही क्यों जागता है? क्या जनता की सेहत की जिम्मेदारी सिर्फ त्योहारों के कुछ दिनों तक ही है? खाद्य सुरक्षा विभाग का काम क्या सिर्फ त्योहारों पर निरीक्षण की औपचारिकता निभाना, दो-चार दुकानों से नमूने लेना और फिर अगले त्योहार तक गायब हो जाना है? जनता को ऐसे विभाग की जरूरत है, जो साल के बारहों महीने उसकी थाली की रखवाली करे। मिलावट कोई मौसमी कारोबार नहीं है, बल्कि सालभर चलने वाला ऐसा संगठित धंधा है, जिसका सबसे बड़ा बाजार त्योहारों के दौरान तैयार होता है। मिलावटखोरों को भी पता है कि विभाग की सक्रियता त्योहारों तक सीमित रहती है। वे पूरे साल मिलावटी सामान तैयार करते हैं, उसका भंडारण करते हैं और त्योहारों पर बाजार में उतार देते हैं। ऐसे में विभाग की मौसमी कार्रवाई आखिर किस काम की है? क्या यह व्यवस्था की विफलता नहीं है?

मिठाई में मिलावट केवल खाद्य अपराध नहीं, बल्कि लोगों के स्वास्थ्य के साथ गंभीर खिलवाड़ है। सिंथेटिक मावा, नकली पनीर और हानिकारक रसायनों से तैयार खाद्य सामग्री बेचने वालों के खिलाफ कठोर कार्रवाई होनी चाहिए। मिलावट करने वाला दुकानदार किसी भी तरह की नरमी का हकदार नहीं है। इसके बावजूद नमूने फेल होने पर कई बार मामूली जुर्माना लगाकर मामला निपटा दिया जाता है। यह जुर्माना उसकी एक दिन की कमाई से भी कम होता है। ऐसी कार्रवाई से अपराधियों को डर नहीं लगता, बल्कि उनका हौसला और बढ़ता है।

सोचिए, उस गरीब परिवार के बारे में, जो सालभर की मेहनत के बाद दीपावली पर अपने बच्चों के लिए एक किलो मिठाई खरीदता है। उसे क्या पता कि वह मिठाई के साथ बीमारी भी घर ले जा रहा है। बच्चे की तबीयत बिगड़ने पर परिवार डॉक्टर और दवाइयों के चक्कर लगाता है, लेकिन उसे यह अंदाजा तक नहीं होता कि बीमारी की वजह वही मिठाई हो सकती है, जिसे वह प्यार से घर लाया था। इस धोखे के लिए केवल मिलावटखोर ही नहीं, बल्कि अपनी जिम्मेदारी से मुंह मोड़ने वाला विभाग भी जवाबदेह है। जरूरी है कि खाद्य पदार्थों की जांच त्योहारों तक सीमित न रहे। किसी भी दिन, किसी भी दुकान पर औचक निरीक्षण हो। मिलावट साबित होने पर दोषियों के लाइसेंस रद्द किए जाएं, दुकानें सील हों और कानून के अनुसार कठोर सजा मिले। जांच रिपोर्ट सार्वजनिक की जाए और दुकानों की स्वच्छता का ग्रेड भी प्रदर्शित हो, ताकि ग्राहक सोच-समझकर खरीदारी कर सकें। खाद्य विभाग के पास अक्सर स्टाफ और संसाधनों की कमी का बहाना होता है, लेकिन सवाल इच्छाशक्ति का भी है। यदि त्योहारों पर जांच हो सकती है तो पूरे साल क्यों नहीं?

यह लड़ाई सिर्फ मिठाई की नहीं, बल्कि हमारे स्वास्थ्य और आने वाली पीढ़ियों के भविष्य की है। त्योहार खुशियों के लिए होते हैं, डर के लिए नहीं। सरकार को तय करना होगा कि उसे मौसमी कार्रवाई का दिखावा करना है या पूरे साल ईमानदारी से निगरानी। जनता का सवाल सीधा है, जब हमारी थाली में जहर परोसा जा रहा था, तब खाद्य सुरक्षा विभाग कहां था? अब इस सवाल का जवाब केवल आश्वासन से नहीं, ठोस कार्रवाई से देना होगा।

लोकतंत्र बचाने की होड़ में देश कौन बचाएगा ?

सड़क पर दो गठबंधन और नारा एक ही, लोकतंत्र बचाओ, सत्ता में रहते हुए अराजकता हटेगी कैसे ?

देश के दोनों राष्ट्रीय गठबंधन लोकतंत्र बचाने पर एकमत हैं। दोनों इसके लिए सड़क पर उतरे हैं। यह दृश्य लोकतंत्र की ताकत भी दिखाता है और उसकी विडंबना भी। कांग्रेस गठबंधन 'वोट बचाओ, लोकतंत्र बचाओ' के नारे के साथ मैदान में है, तो भाजपा गठबंधन उसके विरोध में 'लोकतंत्र बचाओ, अराजकता हटाओ' का संदेश लेकर सड़क पर उतरा है। एक तरफ वोट चोरी का आरोप है, दूसरी तरफ अराजकता फैलाने का आरोप। दोनों ही पक्ष लोकतंत्र को खतरे में बता रहे हैं, लेकिन खतरा कौन पैदा कर रहा है, इस पर दोनों की राय अलग-अलग है।

भाजपा का आरोप है कि कांग्रेस का लोकतंत्र बचाओ अभियान दरअसल अराजकता फैलाने की कोशिश है। उसका तर्क है कि चुनाव आयोग जैसी संवैधानिक संस्था पर सवाल उठाकर, संसद को बाधित करके और सड़कों पर भ्रम फैलाकर कांग्रेस खुद अराजकता पैदा कर रही है। भाजपा के बड़े नेता विभिन्न राज्यों में पदयात्राएं निकाल रहे हैं। केंद्रीय मंत्री जेपी नड्डा ने भोपाल में 'लोकतंत्र बचाओ, अराजकता हटाओ' पदयात्रा का नेतृत्व किया। इन पदयात्राओं में जुट रही भीड़ के माध्यम से भाजपा अपनी जमीनी पकड़ और राजनीतिक ताकत दिखाना चाहती है। उसका संदेश साफ है कि लोकतंत्र बचाना है तो अराजकता हटानी होगी।

लेकिन जनता के लिए लोकतंत्र का अर्थ केवल चुनाव और राजनीतिक नारे नहीं हैं। वह एक बार वोट देती है, लेकिन अगले पांच साल शासन व्यवस्था के बीच गुजारती है। वोट देने के बाद जनता थाने, तहसील और नगर निगम के चक्कर लगाती है। वहीं उसे लोकतंत्र का वास्तविक अनुभव होता है। लोकतंत्र केवल चुनावी प्रक्रिया नहीं, बल्कि शासन व्यवस्था भी है। इसलिए इस व्यवस्था में व्याप्त अराजकता लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ा खतरा है। राजनीतिक दलों के बीच लोकतंत्र बचाने का द्वंद्व काफी हद तक सियासी नैरेटिव की लड़ाई है। जनता चुनाव के समय अपना निर्णय सुना देती है, लेकिन चुनाव के बाद शासन व्यवस्था ही उसकी किस्मत तय करती है।

राजनीति में नैरेटिव बनाने और उसका जवाब देने की अपनी अहमियत है। सवाल उठ रहे हैं कि राहुल गांधी वोट चोरी का नैरेटिव खड़ा कर रहे हैं और भाजपा उसका जवाब दे रही है। राजनीति में पहल करके अपनी बात जनता तक पहुंचाने वाले को बढ़त



मिलती है, जबकि केवल प्रतिक्रिया देने वाला अक्सर पीछे रह जाता है। कांग्रेस और भाजपा का वैचारिक टकराव अब सड़क पर आ गया है। दोनों एक-दूसरे को अराजक साबित करने में जुटे हैं। कांग्रेस का गठबंधन दिल्ली में विरोध प्रदर्शन और प्रेस कॉन्फ्रेंस तक सीमित है, जबकि भाजपा इस अभियान को राज्यों और गांवों तक ले जा रही है। दोनों का लक्ष्य जनमत को अपने पक्ष में करना है।

सबसे बड़ा सवाल यह है कि जनादेश से बनने वाली शासन व्यवस्था अराजकता दूर करने के प्रति कितनी गंभीर है। भारत का लोकतंत्र इतना मजबूत है कि यहां सत्ता परिवर्तन चुनावी प्रक्रिया से होता है। एक वोट से सरकारें गिर सकती हैं और एक वोट से उम्मीदवार की जीत-हार तय हो सकती है। शासन व्यवस्था स्थायी है, जबकि सरकार और शासक जनादेश के आधार पर बदलते रहते हैं। पांच साल का जनादेश स्थायी नहीं होता। बहुमत को अपने पक्ष में बनाए रखने के लिए राजनीतिक दल लगातार सक्रिय रहते हैं। भाजपा और कांग्रेस गठबंधन के बीच चल रहा मौजूदा संघर्ष भी इसी राजनीतिक प्रक्रिया का हिस्सा है। सरकारों की वापसी यानी प्रो-इनकंबेंसी का सवाल भी शासन व्यवस्था से जुड़ा है। जनता किसी सरकार को दोबारा मौका तभी देती है, जब उसे उसके कामकाज में भरोसा दिखाई देता है। कांग्रेस की राज्य सरकारों का रिकॉर्ड इस मामले में बहुत अच्छा नहीं रहा है। कई राज्यों में उसकी सरकारें एक कार्यकाल के बाद सत्ता में वापसी नहीं कर सकीं। इसके विपरीत भाजपा कई राज्यों में लगातार दो-तीन बार सरकार बनाने में सफल रही है। इसका अर्थ है कि जनता शासन और विकास के कामकाज को महत्व देती है। वह देखती है कि सड़क बनी या नहीं, पानी मिला या नहीं और थाने में उसकी सुनवाई हुई या नहीं। इन्हीं अनुभवों के आधार पर वह सरकार को दोबारा मौका देती है या सत्ता से बाहर कर देती है।

हालांकि इसका अर्थ यह नहीं कि भाजपा शासित राज्यों में शासन व्यवस्था पूरी तरह बेहतर है। तंत्र की सबसे बड़ी कमजोरी भ्रष्टाचार है। कई बार ऐसा लगता है कि भ्रष्टाचार के बिना विकास योजनाओं की कल्पना ही नहीं की जा सकती। सड़क बनती है तो उसकी गुणवत्ता कमीशनखोरी की भेंट चढ़ जाती है। पुल बनते हैं तो उद्घाटन से पहले ही दरारें दिखाई देने लगती हैं। विभागों में बिना पैसे के फाइल आगे बढ़ना मुश्किल हो जाता है। यह भी एक तरह की अराजकता है, जो लोकतंत्र को भीतर से खोखला कर रही है। विकास का लाभ जनता तक पहुंचने के बजाय व्यवस्था की खामियों में उलझ जाता है।

शासन तंत्र में जवाबदेही और पारदर्शिता की कमी भी गंभीर समस्या है। लालफीताशाही और जटिल प्रक्रियाएं आम आदमी के लिए मुश्किलें पैदा करती हैं। व्यवस्था की वास्तविक स्थिति वही व्यक्ति बता सकता है, जिसे किसी काम के लिए सरकारी तंत्र से गुजरना पड़ता है। जनता का पैसा जितना खर्च होता है, उसके अनुपात में परिणाम दिखाई नहीं देते। शायद इसी कारण सरकारों ने प्रत्यक्ष लाभ अंतरण यानी डीबीटी के माध्यम से लोगों के बैंक खातों में सीधे सहायता पहुंचाने पर अधिक जोर दिया है। इससे बिचौलियों और अनियमितताओं की गुंजाइश कम हुई है। डिजिटल गवर्नेंस ने भी कई स्तरों पर पारदर्शिता बढ़ाई है, लेकिन शासन तंत्र में अराजकता और नैतिक पतन की समस्या अब भी बनी हुई है।

इसमें विपक्ष की भूमिका भी महत्वपूर्ण है। संसदीय व्यवस्था की खूबसूरती यही है कि विपक्ष आलोचना और वैकल्पिक सुझावों के माध्यम से शासन संचालन में अपनी भागीदारी निभाता है। लेकिन पक्ष और विपक्ष के बीच संवादहीनता बढ़ रही है। संसद में बहस कम और नारेबाजी ज्यादा दिखाई देती है। सड़क पर संवाद की जगह टकराव ने ले ली है। राजनीतिक लड़ाई अपनी जगह है, लेकिन निर्वाचित प्रतिनिधियों की प्राथमिकता शासन तंत्र की अराजकता और अनैतिकता को समाप्त करना होना चाहिए।

असली लड़ाई राजनीतिक शक्ति प्रदर्शन की नहीं, बल्कि शासन के प्रदर्शन की है। कोई भी व्यवस्था पूरी तरह दोषमुक्त नहीं हो सकती, लेकिन उसमें इतनी नैतिकता, पारदर्शिता और सुशासन जरूर होना चाहिए कि आम आदमी को अपना काम कराने के लिए डरना या भटकना न पड़े। भ्रष्टाचार पर जीरो टॉलरेंस केवल भाषणों तक सीमित नहीं रहना चाहिए। राजनीतिक दलों की असली उपलब्धि उनकी सरकारों के कामकाज से तय होगी। शासन व्यवस्था में जितना सुधार होगा, जनता का भरोसा भी उतना ही बढ़ेगा।

लोकतंत्र बचाने के लिए दोनों गठबंधन सड़क पर उतरने को तैयार हैं, लेकिन देश बचाने की जिम्मेदारी कौन उठाएगा? लोकतंत्र एक प्रक्रिया है, जबकि देश और उसकी शासन व्यवस्था को बेहतर बनाना निरंतर चलने वाली जिम्मेदारी है। यदि दोनों गठबंधन वास्तव में लोकतंत्र बचाना चाहते हैं तो उन्हें सड़क के साथ-साथ सिस्टम को भी सुधारना होगा। थाने की कार्यप्रणाली, तहसील की ईमानदारी और नगर निगम की जवाबदेही सुनिश्चित करनी होगी। जनता अंततः नारे नहीं, अपने काम होते देखना चाहती है। जो शासन व्यवस्था को बेहतर बनाएगा, वही जनता का भरोसा जीतेगा और उसी के पक्ष में जनादेश जाएगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

अब भोपाल का मौसम बताएगा भोपाल का भविष्य

एसी नहीं, पेड़ों से ठंडा होगा शहर। सिटीज टू के तहत क्लाइमेट सेंटर की पहल। झीलों की नगरी अब आंकड़ों की नगरी भी बनेगी

भोपाल प्रदेश के शहरों को जलवायु परिवर्तन, बढ़ते तापमान, प्रदूषण, जल संकट और पर्यावरणीय चुनौतियों से बचाने के लिए राज्य सरकार ने एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है। नगरीय विकास विभाग की पहल पर स्टेट क्लाइमेट सेंटर बनाया जा रहा है। यह केंद्र प्रदेश के शहरों के लिए जलवायु संबंधी चुनौतियों से निपटने का नया कवच बनेगा। इस पहल ने पर्यावरण प्रेमियों के बीच नई उम्मीद जगाई है, क्योंकि अब तक शहर पहले बनते थे और बाद में मौसम की मार झेलते थे। अब मौसम को समझकर शहरों के विकास की योजना तैयार की जा सकेगी।

केंद्र सरकार की सिटीज टू परियोजना के तहत इस केंद्र का प्रमुख उद्देश्य शहरी क्षेत्रों में जलवायु अनुकूल विकास की व्यवस्था तैयार करना है। यह केवल पर्यावरण संबंधी आंकड़े जुटाने तक सीमित नहीं रहेगा, बल्कि उन आंकड़ों के आधार पर शहरों के विकास की योजनाएं तैयार करने में भी मदद करेगा। इसके लिए नगरीय विकास विभाग ने विशेषज्ञों की नियुक्ति की प्रक्रिया शुरू की है। इसमें एक चीफ क्लाइमेट एक्शन ऑफिसर सहित कुल चार विशेषज्ञ नियुक्त किए जाएंगे। फिलहाल प्रदेश के उज्जैन और जबलपुर सिटीज टू परियोजना में शामिल हैं। इस केंद्र के चार प्रमुख काम होंगे। पहला, शहरों में तापमान, बारिश, वायु प्रदूषण, भूजल स्तर, हरित क्षेत्र, कचरा प्रबंधन और जल प्रदूषण से जुड़े आंकड़ों का संग्रहण और विश्लेषण। इससे पता चल सकेगा कि किस इलाके में गर्मी ज्यादा है, कहां पानी की कमी है और कहां धूल तथा प्रदूषण का स्तर अधिक है। दूसरा, पर्यावरणीय बदलावों और प्रदूषण से होने वाले संभावित नुकसान का आकलन। यदि किसी इलाके में बाढ़ का खतरा है या लू का प्रभाव अधिक पड़ सकता है तो उसकी पहचान पहले से की जा सकेगी। तीसरा, शहरों की भौगोलिक परिस्थितियों और पर्यावरणीय चुनौतियों के अनुरूप क्लाइमेट एक्शन प्लान तैयार करना। इसके तहत यह तय करने में मदद मिलेगी कि कहां हरियाली बढ़ाने की जरूरत है और कहां वर्षा जल का संरक्षण किया जाना चाहिए। चौथा, तकनीकी और नीतिगत सहयोग। यह केंद्र कलेक्टर, नगर निगम और विकास प्राधिकरण जैसे संस्थानों को शहरों की जरूरत के अनुसार योजनाएं बनाने में मदद करेगा।

भोपाल को इसकी जरूरत सबसे ज्यादा महसूस होती है। झीलों की नगरी कहलाने वाले इस शहर में बड़ा तालाब सिमट रहा है और शाहपुरा सहित अन्य जलाशयों के किनारों पर कंक्रीट का विस्तार बढ़ रहा है। बढ़ता तापमान, धूल और प्रदूषण, अनियमित बारिश तथा जलभराव की समस्या शहर के पर्यावरणीय संतुलन को प्रभावित कर रही है। ऐसे में क्लाइमेट सेंटर भोपाल के लिए संजीवनी साबित हो सकता है। यदि आंकड़े बताते हैं कि एमपी नगर में तापमान सबसे अधिक है तो वहां ग्रीन कॉरिडोर विकसित करने को प्राथमिकता दी जा सकती है। यदि कोलार क्षेत्र में भूजल स्तर तेजी से गिर रहा है तो वहां नई इमारतों के निर्माण में वाटर हार्वेस्टिंग की व्यवस्था अनिवार्य करने जैसे कदम उठाए जा सकते हैं। इससे विकास अंधाधुंध नहीं, बल्कि पर्यावरणीय जरूरतों को ध्यान में रखकर होगा।



भोपाल को इसकी जरूरत सबसे ज्यादा महसूस होती है। झीलों की नगरी कहलाने वाले इस शहर में बड़ा तालाब सिमट रहा है और शाहपुरा सहित अन्य जलाशयों के किनारों पर कंक्रीट का विस्तार बढ़ रहा है। बढ़ता तापमान, धूल और प्रदूषण, अनियमित बारिश तथा जलभराव की समस्या शहर के पर्यावरणीय संतुलन को प्रभावित कर रही है। ऐसे में क्लाइमेट सेंटर भोपाल के लिए संजीवनी साबित हो सकता है।

स्टेट क्लाइमेट सेंटर बनने से शहरों का विकास केवल आबादी और बुनियादी सुविधाओं की जरूरत के आधार पर नहीं, बल्कि उनकी पर्यावरणीय क्षमता को ध्यान में रखकर किया जा सकेगा। गर्मी का प्रभाव कम करने के लिए ग्रीन कॉरिडोर, शहरी वन, जलाशयों का संरक्षण, वर्षा जल संचयन, बेहतर सार्वजनिक परिवहन और ऊर्जा दक्ष भवनों को बढ़ावा मिल सकता है। सिटीज टू के तहत राज्यों में स्टेट क्लाइमेट सेंटर को मजबूत करने, क्लाइमेट डेटा ऑब्जर्वेटरी स्थापित करने और तकनीकी सहायता उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

इस तरह पर्यावरण संबंधी आंकड़े केवल सरकारी रिकॉर्ड का हिस्सा नहीं रहेंगे, बल्कि शहरों के भविष्य की योजना बनाने का आधार बनेंगे। शहरों को ठंडा रखने के लिए हमें एसी से ज्यादा पेड़ों पर भरोसा करना होगा। गर्मी लगने पर हम एसी खरीदते हैं, लेकिन एसी घर को ठंडा करने के साथ बाहर की हवा में गर्मी भी बढ़ाता है। इसके विपरीत एक बड़ा पीपल या नीम का पेड़ बिना बिजली खर्च किए छाया और ठंडक देता है, साथ ही धूल भी रोकता है। क्लाइमेट सेंटर के आंकड़ों से यह तय करने में मदद मिल सकती है कि किस चौराहे और सड़क पर किस तरह के पेड़ लगाने से तापमान कम किया जा सकता है। यह विज्ञान का ऐसा उपयोग होगा, जिसका सीधा लाभ आम आदमी को मिलेगा। विकास को केवल सड़कों की चौड़ाई से नहीं मापा जाना चाहिए। असली विकास यह है कि सड़क पर चलने वाला बच्चा धूल के बिना सांस ले सके, बुजुर्ग लू की मार से बचे रहें और मजदूरों को काम के दौरान छाया मिल सके।

इस केंद्र का एक महत्वपूर्ण लाभ जवाबदेही और पारदर्शिता के रूप में भी सामने आ सकता है। अभी प्रदूषण को लेकर कई तरह के बहाने बनाए जाते हैं, लेकिन जब केंद्र नियमित रूप से बताएगा कि भोपाल के किस वार्ड में पीएम 2.5 का स्तर कितना है, कहां हरियाली कम है और कहां प्रदूषण अधिक है, तब संबंधित विभागों की जवाबदेही तय करना आसान होगा। जनता भी अपने इलाके की पर्यावरणीय स्थिति के बारे में सवाल पूछ सकेगी। इसके साथ ही क्लाइमेट ऑफिसर, डेटा साइंटिस्ट, अर्बन इकोलॉजिस्ट और ग्रीन आर्किटेक्ट जैसे नए रोजगार के अवसर भी पैदा होंगे। मध्य प्रदेश के युवाओं को अपने ही शहर में रहकर पर्यावरण और जलवायु के क्षेत्र में काम करने का अवसर मिल सकेगा। हालांकि सबसे बड़ा खतरा यही है कि यह केंद्र भी दूसरी सरकारी योजनाओं की तरह केवल बोर्ड और उद्घाटन तक सीमित न रह जाए। अक्सर संस्थान बनते हैं, विशेषज्ञ नियुक्त होते हैं और रिपोर्ट तैयार होती हैं, लेकिन उन पर अमल नहीं होता। इसलिए जरूरी है कि इस केंद्र की रिपोर्ट को शहरों के मास्टर प्लान का हिस्सा बनाया जाए। बड़ी कॉलोनियों, मॉल और सड़कों के निर्माण से पहले उनके पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन अनिवार्य हो और क्लाइमेट सेंटर की सिफारिशों को गंभीरता से लागू किया जाए। ऐसा नहीं हुआ तो यह केंद्र भी कागजों पर हरियाली दिखाने तक सीमित रह जाएगा। प्रदेश के शहरों को जलवायु परिवर्तन से बचाने की यह पहल केवल एक सरकारी योजना नहीं, बल्कि शहरों में रहने और विकास को देखने का नया नजरिया है। शहर केवल ईंट, सीमेंट और सरिये से नहीं बनते, उनकी असली पहचान हवा, पानी, पेड़ और तालाब से होती है। स्टेट क्लाइमेट सेंटर ईमानदारी और प्रभावी ढंग से काम करे तो आने वाले वर्षों में भोपाल, इंदौर, उज्जैन और जबलपुर देश के सामने विकास और पर्यावरण के संतुलन का उदाहरण बन सकते हैं। अंततः सवाल यही है कि हम अपने बच्चों के लिए ऐसा शहर छोड़ना चाहते हैं, जहां एसी के बिना रहना मुश्किल हो जाए या ऐसा शहर, जहां पेड़ों की छाया में भी सुकून मिल सके। इसका जवाब केवल क्लाइमेट सेंटर नहीं, बल्कि हमारी नीतियों और उनके क्रियान्वयन में छिपा है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

आजकल

एआई का नौकरियों पर हमला

फाइल पढ़ने वाले से रिपोर्ट लिखने वाले तक, सबकी कुर्सी पर एआई की नजर

आने वाले पांच वर्षों में एंट्री-लेवल की 50 प्रतिशत तक नौकरियां खत्म हो सकती हैं। खास तौर पर तीन पेशे इसके निशाने पर हैं: वकालत, सलाहकार सेवाएं और वित्तीय क्षेत्र। एंथ्रोपिक के सीईओ डारियो अमोदेई ने यह चेतावनी दी है। इन तीनों क्षेत्रों में जूनियर स्तर के कर्मचारियों का करीब 80 प्रतिशत काम जानकारी जुटाना, दस्तावेजों का विश्लेषण करना, लंबे डेटा को पढ़कर उसका सार बनाना और शुरुआती रिपोर्ट तैयार करना है। एआई यही काम इंसान की तुलना में कहीं अधिक तेजी और कम लागत में कर रहा है। आखिर सबसे पहले जूनियर कर्मचारियों की नौकरी पर ही खतरा क्यों है? इसे एक उदाहरण से समझ सकते हैं। एक वरिष्ठ वकील अदालत में बहस करता है और क्लाइंट का भरोसा जीतता है। यह काम एआई नहीं कर सकता, लेकिन उसका जूनियर रातभर बैठकर 500 पन्नों के पुराने फैसले पढ़ता है। यही काम एआई कुछ सेकंड में कर सकता है। कंपनियों का गणित सीधा है। यदि एक एआई टूल पांच जूनियर कर्मचारियों के बराबर काम कर सकता है और उसका सालाना खर्च एक कर्मचारी के वेतन से भी कम है, तो कंपनी पांच लोगों को क्यों रखेगी?

इसका अर्थ यह नहीं कि वकील, सलाहकार या वित्तीय विशेषज्ञ खत्म हो जाएंगे। दरअसल, काम का स्वरूप बदलेगा। डेटा जुटाना, शोध करना और सार तैयार करना एआई के जिम्मे होगा, जबकि रणनीति बनाना, क्लाइंट को समझाना, अदालत में पक्ष रखना और जोखिम पर अंतिम फैसला लेना इंसान के हिस्से में रहेगा। कर्मचारियों की संख्या घट सकती है, लेकिन एआई का इस्तेमाल जानने वालों की अहमियत बढ़ेगी। भारत के लिए चुनौती और बड़ी है। हर साल लाखों युवा कानून और वित्त की पढ़ाई पूरी करते हैं। उनकी पहली नौकरी अक्सर शोध और रिपोर्ट तैयार करने से शुरू होती है। हमारे शिक्षण संस्थानों को भी बदलते समय के अनुरूप पाठ्यक्रम और कौशल विकसित करने होंगे। अन्यथा डिग्रियां तो होंगी, लेकिन रोजगार के अवसर कम पड़ जाएंगे। हालांकि एआई केवल नौकरियां खत्म नहीं करेगा, बल्कि नए अवसर भी पैदा करेगा। चिकित्सा अनुसंधान और नई दवाओं की खोज जैसे क्षेत्रों में काम की गति बढ़ेगी। एआई को नौकरी छीनने वाला राक्षस मानने के बजाय एक सक्षम औजार के रूप में देखना होगा। आज के युवाओं के लिए संदेश स्पष्ट है: एआई से मुकाबला नहीं, उसका इस्तेमाल करना सीखिए। भविष्य में वही आगे रहेगा, जो एआई का बेहतर उपयोग करना जानता होगा।

संवैधानिक अधिकार की लक्ष्मण रेखा तय

सुप्रीम कोर्ट ने कहा, विरोध स्थायी कब्जा नहीं हो सकता। लोकतंत्र में असहमति का स्थान है, अतिक्रमण का नहीं। रामलीला मैदान की स्वतंत्रता बनाम बाजार की आजीविका। एक दिन की अनुमति, 17 दिन का अनुशासनहीन विस्तार।

मुख्य चुनाव आयुक्त के खिलाफ विरोध प्रदर्शन और सार्वजनिक स्थलों पर अनिश्चितकालीन धरने के अधिकार का प्रश्न अब सुप्रीम कोर्ट के सामने है। अदालत ने दिल्ली के रामलीला मैदान में हुए विरोध प्रदर्शन को लेकर महत्वपूर्ण टिप्पणी की है। कोर्ट ने कहा कि कोई भी व्यक्ति या संगठन किसी तय जगह पर अनिश्चितकाल तक कब्जा नहीं कर सकता। हालांकि, हर किसी को विरोध प्रदर्शन करने का अधिकार है और इस अधिकार का सम्मान किया जाना चाहिए। मंगलवार को सुप्रीम कोर्ट ने त्योहारों के मौसम में विरोध प्रदर्शन के कारण व्यापारिक गतिविधियां प्रभावित होने का आरोप लगाने वाली किराना कमेटी, दिल्ली की याचिका पर केंद्र सरकार और अन्य पक्षों को नोटिस जारी कर जवाब मांगा। मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत, न्यायमूर्ति जॉयमाल्या बागची और न्यायमूर्ति वी. मोहना की पीठ इस मामले से जुड़ी कई याचिकाओं पर सुनवाई कर रही थी। ये विरोध प्रदर्शन मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार के खिलाफ किए जा रहे हैं। याचिका में दावा किया गया है कि रामलीला मैदान में प्रदर्शन के कारण आसपास के इलाकों में कारोबार प्रभावित हो रहा है और व्यापारियों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ रहा है। व्यापारी संगठनों की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता मुकुल रोहतगी ने अदालत को बताया कि प्रदर्शन स्थल के आसपास करीब 50 लाख लोग रहते हैं। विरोध प्रदर्शन के चलते दुकानें बंद हैं और त्योहारों के मौसम में व्यापारिक गतिविधियों पर बुरा असर पड़ रहा है। उन्होंने इस समस्या का समाधान निकालने के लिए अदालत से लीक से हटकर कोई रास्ता तलाशने की अपील की। इस पर मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत ने कहा कि आप किसी जगह पर हर समय कब्जा नहीं कर सकते। किसान, पत्रकार और दूसरे लोग कहां जाएंगे? हर किसी को विरोध करने का अधिकार है, लेकिन इसके लिए निश्चित समय और स्थान तय होना चाहिए।

सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने दिल्ली पुलिस की ओर से बताया कि कॉकरोच जनता पार्टी यानी सीजेपी को जंतर-मंतर पर प्रदर्शन के लिए केवल एक दिन की अनुमति दी गई थी, लेकिन प्रदर्शनकारी 17 दिन तक वहां बैठे रहे। मेहता ने कहा कि प्रदर्शनकारियों ने बिना अनुमति संसद की ओर मार्च भी किया। संसद देश की संप्रभुता का प्रतीक है। बिना अनुमति संसद या सुप्रीम कोर्ट तक मार्च करने की इजाजत नहीं दी जा सकती। उन्होंने यह भी कहा कि जो संगठन बंद या प्रदर्शन का आह्वान करता है, उसे उसके लिए जिम्मेदार भी होना चाहिए।

यह पूरा घटनाक्रम केवल एक संगठन की अनुशासनहीनता नहीं, बल्कि देश में विरोध के बदलते स्वरूप को लेकर गंभीर चेतावनी भी है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19 ने हर नागरिक को विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी है। इसी के तहत शांतिपूर्ण विरोध प्रदर्शन का अधिकार भी मिलता है, लेकिन संविधान में इस स्वतंत्रता पर उचित प्रतिबंधों का भी प्रावधान है। सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी इसी संवैधानिक संतुलन की ओर ध्यान दिलाती है। कोई भी अधिकार निरपेक्ष नहीं हो सकता। यदि एक व्यक्ति या संगठन को अनिश्चितकाल तक किसी सार्वजनिक स्थल पर बैठने का अधिकार दे दिया जाए तो दूसरे लोगों का उसी स्थल पर आने-जाने का अधिकार प्रभावित होगा। रामलीला मैदान सार्वजनिक संपत्ति है, किसी दल या विचारधारा की निजी संपत्ति नहीं। यदि आज एक दल वहां अनिश्चितकाल तक बैठ जाए तो कल किसान, मजदूर और छात्र आंदोलन के लिए स्थान कहां बचेगा? इसलिए समय सीमा तय करना अधिकार को कुचलना नहीं, बल्कि सभी के बीच अधिकारों का समान वितरण सुनिश्चित करना है। मुकुल रोहतगी ने जो आंकड़ा दिया, वह गंभीरता से विचार करने योग्य है।

प्रदर्शन स्थल के आसपास करीब 50 लाख लोग रहते हैं। इनमें बड़ी संख्या छोटे व्यापारियों, किराना दुकानदारों, कपड़ा और जूता कारोबारियों की है। त्योहारों का मौसम उनके लिए पूरे वर्ष की कमाई का महत्वपूर्ण अवसर होता है। यदि उस समय सड़कों पर बैरिकेड लगे हों, पुलिस की गाड़ियां खड़ी हों, लाउडस्पीकर बज रहे हों और ग्राहकों का बाजार तक पहुंचना मुश्किल हो जाए तो उसकी भरपाई कौन करेगा? क्या विरोध करने वाले संगठन ने कभी सोचा कि उसके प्रदर्शन की आर्थिक कीमत कोई दूसरा चुका रहा है? विरोध का अधिकार महत्वपूर्ण है, लेकिन व्यापार और आजीविका का अधिकार भी उतना ही महत्वपूर्ण है। दोनों के बीच संतुलन बनाना ही न्याय है। एक दिन की अनुमति के बावजूद 17 दिन तक प्रदर्शन जारी रखना केवल नियमों का उल्लंघन नहीं, बल्कि प्रशासन की व्यवस्था और सहनशीलता की परीक्षा भी है। प्रशासन ने एक दिन के लिए अनुमति दी थी। इसका अर्थ है कि उसी अवधि के लिए पुलिस बल, सफाई और यातायात की व्यवस्था की गई थी। यदि आयोजक 17 दिन तक वहां बैठे रहते हैं तो प्रशासन के सारे प्रबंध प्रभावित होते हैं। इससे भी गंभीर बात संसद की ओर बिना अनुमति मार्च करना है। संसद केवल एक इमारत नहीं, बल्कि भारत की संप्रभुता का प्रतीक है।

वहां देश के चुने हुए प्रतिनिधि बैठते हैं। यदि कोई भी संगठन बिना अनुमति संसद की ओर कूच करने लगे तो यह लोकतांत्रिक व्यवस्था और सुरक्षा, दोनों के लिए गंभीर चुनौती है। संसद की सुरक्षा पर कोई समझौता नहीं हो सकता। यह विरोध प्रदर्शन मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार के खिलाफ हो रहा है। चुनाव आयोग एक संवैधानिक संस्था है। उसकी निष्पक्षता पर सवाल उठाना लोकतंत्र में विपक्ष का अधिकार है, लेकिन सवाल उठाने का तरीका और मंच भी महत्वपूर्ण हैं। क्या किसी संवैधानिक संस्था के खिलाफ सड़क पर अनिश्चितकाल तक घेराव करना उचित तरीका है? यदि हर संवैधानिक संस्था के प्रत्येक फैसले के खिलाफ सड़कें घेर ली जाएंगी तो संस्थाएं अपना काम कैसे करेंगी? चुनाव आयोग को चुनाव कराने हैं और मतदाता सूचियां तैयार करनी हैं। उसे राजनीतिक दबाव से मुक्त रहना चाहिए। विरोध होना चाहिए, लेकिन उसका स्वरूप ऐसा हो कि संस्थाओं की कार्यप्रणाली बाधित न हो। संसद में सवाल उठाना, अदालत में याचिका दायर करना और जनता के बीच तर्क के साथ अपनी बात रखना लोकतांत्रिक विरोध के प्रभावी माध्यम हैं। सुप्रीम कोर्ट ने लीक से हटकर समाधान तलाशने की बात कही है। इसका अर्थ है कि इस समस्या से निपटने के लिए व्यवस्था में सुधार जरूरी है। सर